दीनदयाल उपाध्याय की अंत्योदय दृष्टि

दीनदयाल उपाध्याय स्वतंत्र भारत के ऐसे चिंतक, विचारक एवं युगदृष्टा हुए हैं जिनके चिंतन ने भारत ही नहीं संपूर्ण विश्व को अपनी ओर आकर्षित किया है। हालाँकि स्वतंत्रता के पश्चात उनके चिंतन पर अधिक ध्यान नहीं दिया, परंतु गत कुछ दशकों से उनके एकात्म मानवदर्शन, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद एवं राजनीतिक चिंतन पर कुछ शोध एवं अध्ययन आरंभ हुआ है। इसमें भी अंत्योदय दर्शन के व्यावहारिक पक्ष पर चिंतन सूक्षम अत्यंत हुआ है।

दीनदयाल उपाध्याय का जन्म 25 सितंबर, 1916 को जयपुर के निकट धनकिया रेलवे स्टेशन के आवासीय परिसर में हुआ, जहाँ उनके नाना श्री चुन्नीलाल शुक्ल स्टेशन मास्टर थे। उनके पिता श्री भगवती प्रसाद उपाध्याय भी रेलवे में ही नौकरी करते थे। दीनदयाल उपाध्याय ने अपने बचपन में जितना अधिक मृत्युदर्शन किया वह किसी भी व्यक्ति में वैराग्यभाव उत्पन करने के लिए पर्याप्त है। जब वे मात्र ढाई वर्ष के थे तो उनके पिता श्री भगवती प्रसाद का निधन हो गया। जब वह मात्र सात वर्ष के हुए तो मां का निधन हो गया। उसके बाद नाना के पास रहने लगे। जब दस वर्ष के हुए तो नाना श्री चुन्नीलाल शुक्ल का निधन हो गया। उसके बाद मामा के पास रहने लगे। जब 15 वर्ष के हुए तो मामी का निधन हो गया। जब 18 वर्ष के हुए तो छोटे भाई शिवदयाल का निधन हो गया। जब 19 वर्ष के हुए तो अंतिम सहारा नानी का भी निधन हो गया। बाद में ममेरी बहन रमादेवी के पास रहने लगे तो वह भी बीमारी से ग्रस्त होकर चल बसी। बहन रामदेवी की बीमारी के इलाज हेतु दीनदयाल जी ने अपनी स्नातकोतर अंतिम वर्ष की पढ़ाई भी छोड़ दी थी। उस समय वे मात्र 24 वर्ष के थे। मृत्यु ने बालक दीनदयाल के जीवन पर गहरी छाप छोड़ी। इन सभी झंझावातों ने उनमें वैराग्य भाव उत्पन कर दिया। ऐसा प्रतीत होता है कि भाग्य ने परीक्षा लेने के आलावा उन्हें कुछ नहीं दिया, उन्हें जो कुछ भी मिला वह अपनी सृजनशीलता व कर्मठता के कारण मिला। 25 वर्ष की आयु तक वे राजस्थान और उत्तर प्रदेश के कम से कम 11 स्थानों पर रहे। अपना घर, सुविधा व स्थायित्व संभवत: लोगों में मोह उत्पन करता है। परन्तु, दीनदयालजी को बचपन से लेकर युवावस्था तक ये सभी नसीब नहीं हुए। नये-नये स्थान, नये अपरिचित लोगों से मिलना, उनमें पारिवारिकता का भाव उत्पन्न करना उन्होंने बचपन से ही सीखा होगा *(मिश्र, 2019)*।

अंत्योदय का अर्थ

'अंत्योदय' का शाब्दिक अर्थ है 'समाज के अंतिम व्यक्ति का उदय' यानी समाज के आर्थिक रूप से कमजोर और पिछड़े वर्गों का विकास। इसे समाज के सबसे आखिरी व्यक्ति अथवा सबसे अभावग्रस्त व्यक्ति का उत्थान और विकास भी कह सकते हैं। विकास योजनाओं और आर्थिक विकास का मापन उन लोगों से नहीं किया जा सकता जो आर्थिक सीढ़ी पर ऊपर उठ गए हैं, बल्कि उनसे किया जाना चाहिए जो विकास के पायदान पर सबसे नीचे हैं। इसलिए सरकार को सभी व्यक्तियों के लिए न्यूनतम जीवन स्तर सुनिश्चित करना चाहिए। महात्मा गांधी और विनोबा भावे ने अभावग्रस्त लोगों के विकास हेतु 'सर्वोदय' *(राठी, 2023)* शब्द दिया, तो दीनदयाल उपाध्याय ने इसके लिए 'अंत्योदय' शब्द प्रयोग किया। दीनदयाल उपाध्याय मानते थे कि समष्टि जीवन का कोई भी अंगोपांग, समुदाय या व्यक्ति पीड़ित रहता है तो वह समग्र यानि विराट पुरुष को विकलांग करता है। इसलिए सांगोपांग समाज-जीवन की आवश्यक शर्त है 'अंत्योदय'। मनुष्य की एकात्मता तब आहत हो जाती है जब उसका कोई घटक समग्रता से पृथक पड़ जाता है। इसलिए समाज के योजकों को अंत्योदयी होना चाहिए। 'अंत्योदय' शब्द में संवेदना है, सहानुभूति है, प्रेरणा है, साधना है, प्रामाणिकता है, आत्मीयता है, कर्तव्यपरायणता है और लक्ष्य की स्पष्टता है। दीनदयाल जी अश्रुपूरित आंखों से आंसू पोंछने और मुरझाए चेहरों पर मुस्कराहट लौटाने को 'अंत्योदय' की पहली सीढ़ी मानते थे *(झा 2018)*।

दीनदयाल उपाध्याय अंत्योदय को एक उदाहरण से समझाते हैं। माना सर्दियों में कोई भला आदमी 12 कम्बल बांटने निकला। वह एक जगह गया तो देखा कि झोपड़ी में एक आदमी दो कंबल ओढ़कर और दो बिछाकर बैठा है। आगे बढ़े तो एक आदमी और मिला। वह झोपड़ी में एक कंबल ओढ़कर और एक बिछाकर बैठा था। कुछ दूर आगे बढ़ने पर तीसरा आदमी मिला। वह पेड़ के नीचे एक कंबल ओढ़कर और एक बिछाकर बैठा था। आगे एक चौथा आदमी खुले में बैठा था। उसके पास न ओढ़ने को कुछ था और न बिछाने को। उस भले आदमी ने देखा कि चारों ही सर्दी से कांप रहे हैं। यहां दो विचार मन में आते हैं। वह चारों को तीन-तीन कंबल देकर घर जा सकता था क्योंकि चारों ही परेशान थे। पर उसने सबसे पहले चौथे व्यक्ति को छह कंबल दिये। फिर तीसरे को तीन, दूसरे को दो और अंत में पहले को एक। बस यही है अंत्योदय। अर्थात सबसे पहले और सबसे अधिक सहायता उसे मिले, जिसकी जरूरत सबसे अधिक है। जहां सौ वाट का बल्ब जल रहा हो वहां 25 वाट का एक और बल्ब लगा देने से कुछ लाभ नहीं होगा, पर जहां घुप अंधेरा है वहां 25 वाट के बल्ब से ही बहार आ जाएगी।

दीनदयाल जी कहते हैं कि मनुष्य जो भी कर्म करता है, वो सब समाज के लिए है। श्रम से मूल्य का निर्धारण नहीं होता, अपितु योग्यता के आधार होता है। दुनिया की दृष्टि में मूल्य बदलता रहता है, परंतु वास्तव में श्रम के मूल्य चुकाने की कोई सीमा नहीं है। अध्यापक जो शिक्षा देता है, उसका मूल्य रुपए में नहीं चुकाया जा सकता। किसी डॉक्टर ने आपको मृत्यु से बचा लिया तो उसका आप क्या मूल्य लगा सकते हो? इस प्रकार मनुष्य का काम और उसके बदले उसे जो मिलता है, उसका कोई मेल नहीं। कर्म का मूल्य चुकाना असंभव है। इसीलिये हमारे यहाँ पहले सब काम सेवा कार्य के नाते ही किए जाते थे। रुपए-पैसे में इनका कोई मूल्य नहीं लगाया जा सकता था। सेवा करना ही हमारा धर्म है। शेष सब चिंता समष्टि पर डाल देनी चाहिए *(उपाध्याय, 2016, खंड-11, पृष्ठ-200)*।

प्रत्येक क्षेत्र में महिलाओं को समान अवसर

दीनदयाल जी महिलाओं की सामाजिक, शैक्षणिक और आर्थिक अयोग्यताओं को दूर करने के लिए विशेष प्रयास की बात करते हैं, ताकि वे घर, समाज व राष्ट्र के प्रति अपने दायित्वों का ठीक से निर्वहन कर सके। जनजीवन के प्रत्येक क्षेत्र में महिलाओं को समान अवसर मिलें, परदा प्रथा, दहेज, बाल-विवाह, विषम विवाह आदि कुरीतियों को समाप्त करने के लिए सुधारवादी कार्यक्रम अपनाने होंगे। मातृत्व की प्रतिष्ठा भारतीय संस्कृति की प्रतिष्ठा है, मातृ-कल्याण के कार्यक्रम सामाजिक सुरक्षा के महवपूर्ण अंग होने चाहिए, वेतन और भत्ते में स्त्री और पुरुष दोनों के सामान स्तर रखे जाएं *(उपाध्याय, 2016, खंड-11, पृष्ठ-240)*। दीनदयाल जी कहते थे कि प्रत्येक समर्थ और स्वस्थ व्यक्ति को जीविकोपार्जन की व्यवस्था करना आर्थिक नियोजन व औद्योगिक नीति का लक्ष्य होना चाहिए। बेकारी को दूर करने के लिए रोजगार के नये अवसरों के निर्माण के साथ अर्ध-रोजगार वालों की उत्पादकता और आय बढ़ाने की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। बढ़ी हुई क्रयशक्ति से वे दूसरों को काम दे सकेंगे। काम न मिलने की अवस्था में जीवनयापन के लिए बेकारी भत्ते की व्यवस्था होनी चाहिए *(उपाध्याय, 2016, खंड-11, पृष्ठ-260)*।

मलिन और झुग्गी बस्तियों का पुनर्वास

दीनदयाल उपाध्याय शहरों की मलिन और झुग्गी बस्तियों में रहने वाले लोगों की समस्या पर टिप्पणी करते हुए कहते हैं कि मलिन बस्तियों के हटाने से नहीं, बल्कि उनके पुनर्वास से समस्या का समाधान होगा। यदि आप एक जगह से मलिन बस्ती के निवासियों को हटाते हैं, तो आप सिर्फ एक और मलिन बस्ती तैयार करते हैं। मलिन बस्तियों में निश्चित रूप से सुधार किया जाना चाहिए और नागरिक सुविधा दी जानी चाहिए। इस बस्तियों में मजदूरों के लिए बहुमंजिला इमारतों के बारे में बिना प्रतीक्षा किये सोचा जाना चाहिए, और इन लोगों का जीवन स्तर उठाने के हर संभव प्रयास होने चाहिए *(उपाध्याय, 2016, खंड-12, पृष्ठ-264)*। पूर्व केंद्रीय मंत्री और उत्तर प्रदेश के पूर्व

राज्यपाल रहे श्री राम नाइक दीनदयाल जी से जुड़ा एक मार्मिक प्रसंग सुनाते हैं। मुंबई महानगर कामगारों से भरपूर रहता है, यहाँ की आवासीय समस्या बहुत पुरानी है। मजदूरों को जहाँ जगह मिली, वहीँ रेन बसेरा, टाट की छत, लकड़ी या दफ्ती का घर बना लिया। झोपड़पट्टी से आबाद यहाँ एक नए तरीके का शहर था, उसे 'धारावी' भी कहा गया। झोंपड़पट्टियाँ गैर कानूनी होती हैं, लेकिन इनमें रहने वाले मजदूर कामगार देश के विकास के जीवंत देवता हैं। सरकारें अभियान चलाकर झोंपड़ पट्टियों को उजाड़ देती थी, कामगारों के रहने की समस्या विकराल थी। मुझे इस मानवीय समस्या ने झकझोर दिया। हम कार्यकर्ता उनके पक्ष में खड़े हो गये। हम लोगों ने 'झोंपड़पट्टी जनता परिषद् मुबई' नाम का संगठन खड़ा किया गैर बस्तियों के पक्ष में खड़े हो गए। कुछ लोग हमारे आलोचक भी थे। दीनदयाल जी उन्हीं दिनों मुंबई आए। हमने अपना विषय रखा, उन्होंने अपने परिवार की दादी की मार्मिक कहानी सुनाई। युवा पुत्र चिड़िया द्वारा लगाए गये घोंसले को उजाड़ने जा रहा था। दादी ने पूछा 'यह घोंसला बनाने में चिड़िया को कितना समय लगा होगा? 'युवक ने कहा, कम से कम दो-तीन माह'। दादी ने कहा कि 'इसने तिनका-तिनका जोड़कर अपना घर बनाया है, तुमने शुरू में ही इसे क्यूँ नहीं रोका? अब घर उजाड़ना और बेघर करना कहाँ का न्याय है? पंडित जी ने कथा सुनते हुए कहा 'सबको घर चाहिए. बेघर करना उचित नहीं, मैं मनुष्य हूँ, सभी मनुष्यों को घर चाहिए। ये पक्षी हैं, पशु-पक्षी, कीट-पतंगे को भी आश्रय और आवास चाहिए। उन्होंने हमसे कहा कि तुम 'झोंपड़पट्टी जनता परिषद्' के माध्यम से सही काम कर रहे हो। परिषद् का घोष वाक्य था 'मैं भी मनुष्य हूँ, मुझे घर चाहिए' *(उपाध्याय, 2016, खंड-13, भूमिका)*।

दीनदयाल उपाध्याय के अनुसार आर्थिक नीतियों की सफलता और आर्थिक प्रगति का आंकलन कुलीन या उच्च तबके से नहीं, बल्कि उनसे होगा, जो समाज की सबसे निचली सीढ़ी पर हैं। "इस देश में करोड़ों ऐसे लोग हैं, जो अभी भी अपने मुलभूत अधिकारों से वंचित हैं। सरकार की नीतियों और योजनाओं के निर्धारण में इन करोड़ों लोगों को कोई स्थान नहीं मिलता और न ही प्रशासन की ऐसी कोई मंशा या इच्छा दिखाई देती है, परन्तु इन्हें प्रगति के पथ पर रोड़ा समझा जाता है, तथापि हमारे लिए ये दीन-हीन और निरक्षर ईश्वर का स्वरूप हैं और पूजनीय हैं। इनकी उपासना हमारा धर्म है। देश तब तक उर्जा और स्फूर्ति के साथ आगे नहीं बढ़ सकता, जब तक कि हम सुदूर गाँव-देहात और खेत और खलिहान तक आशा विश्वास का संदेश पहुँचाने में सफल न हों जाएँ, उन स्थानों पर जहाँ समय अभी भी वहीं रुका हुआ है। जहाँ माता-पिता अपनी संतानों को उनके भविष्य को कोई दिशा देने में असमर्थ है। हमारे विश्वास, हमारी प्रार्थना और समर्पण का उद्देश्य और हमारी सफलता और उपलब्धियों के आकलन के केंद्र में वह होना चाहिए *(उपाध्याय, 2016, खंड-12, पृष्ठ-260)*। दीनदयाल उपाध्याय आर्थिक उन्नत्ति के बारे में बात करते हुए कहते हैं "यह सुनिश्चित करना भी आवश्यक है कि विकास योजनाओं द्वारा उत्पन्न धन किसी विशेष वर्ग के हाथों में न पहुँच जाए, अपितु वंचित वर्ग तक भी हमेशा पहुँचता रहे। यह तभी संभव है, जब आर्थिक विकास के साथ नैतिक व चारित्रिक विकास भी होता रहे। तभी समाज के अंतिम व्यक्ति तक पहुंचने का हमारा स्वप्न साकार होगा *(उपाध्याय, 2016, खंड-12)*।

प्रत्येक नागरिक की सृजनशीलता का उपयोग

दीनदयाल जी के अनन्य सहयोगी रहे और उनके चिंतन को चित्रकूट एवं गोण्डा के 500 से अधिक ग्रामों में मूर्त रूप प्रदान करने वाले नानाजी देशमुख कहते हैं, "बातें करने से समाज की समस्याओं का और पीड़ितों की पीड़ा दूर नहीं हो सकती। यह तो करने से ही होगा। एकदम परिवर्तन नहीं होगा, लेकिन यदि किसी ने ठान लिया तो कोई कठिन नहीं है। सकारात्मक मार्ग ढूंढ़ना दीनदयाल जी का स्वभाव था। हर काम सरकार से संभव नहीं है। लेकिन जो लोग सरकार में हैं क्या उनके मन में रचनात्मक भाव है? भारत में सरकार भी चलाना है तो उसे चलाने का भाव सदैव रचनात्मक होना चाहिए। रचनात्मक सरकार होगी तो समाज भी ऐसी सरकार के अनेक रचनात्मक कार्यों में स्वतः

रुचि लेगा। रचनात्मक कार्य और प्रत्येक नागरिक की सृजनशीलता का उपयोग किये बगैर राष्ट्रदेवता को हम प्रसन्न नहीं कर सकते" *(झा, 2018, पृष्ठ 129)*। नानाजी देशमुख कहा करते थे कि "इस देश का भला तक तक नहीं होगा, जब तक हम गांव के लोगों को शिक्षित, संपन्न और योग्य नहीं बनाएंगे। भारत का विकास इसके बिना संभव नहीं है। उनके पैर की बिवाइयां फट गयी हैं, उनको भरने की कोशिश नहीं करेंगे, उन्हें पर्याप्त वस्त्र नहीं हैं, उनके तक ढकने का इंतजाम करना होगा। उनके बच्चों को कुपोषण से बचाते हुए उन्हें पोषक आहार का प्रबंध करना होगा। उनमें से प्रत्येक को लाभदायी रोजगार उपलब्ध नहीं कराएंगे, उनके रहने की आवास व्यवस्था नहीं होगी, उन्हें मानवीय सुविधा के अनुसार उपलब्ध नहीं करा पाएंगे, तब तक भारत का भला नहीं हो सकता। अगर हम ऐसा कर पाए तो भारत का विकास होगा और भारत की आत्मा को शान्ति मिलेगी। अंत्योदय के लिए सबसे पहले ऐसे लोगों की मनोवृत्ति का जागरण करना होगा। उसकी सृजनशीलता के द्वारा उन्हें स्वयं अपने आधार पर खड़ा करना होगा। स्वावलंबन मानव की पहली आवश्यकता है। क्या बिना स्वावलंबन के कोई स्वाभिमानी हो सकता है? जिस समाज या जिस देश में स्वावंबन नहीं, उस देश को संसार में सम्मान नहीं मिल सकता। देश आजाद हुआ। हमें स्वाधीनता मिली। हमें हर गांव में स्वाधीनता का माहौल पैदा करना चाहिए था। हमें स्वतंत्रता इसलिए मिली कि हम स्वाधीन राष्ट्र के स्वाभिमानी नागरिक बने। व्यक्ति, परिवार और आबादी के बारे में दीनदयालजी की यही आकांक्षा थी" *(झा, 2018)*।

अंत्योदय में समाज की भूमिका

गत बीस-पच्चीस वर्षों की बात करें तो गांधी, दीनदयाल जैसे महापुरुषों की प्रेरणा से समाज में अनेक व्यक्तियों एवं संस्थाओं ने अपने-अपने स्तर पर अंत्योदय के लिए ठोस प्रयास किये हैं। प्रसिद्धिपरांगमुख भाव एवं बिना किसी सरकारी सहयोग के वे दूरदराज के क्षेत्रों में आज भी अपना काम कर रहे हैं, परन्तु राष्ट्रीय स्तर पर न तो देशवासी इन्हें जानते हैं और न ही इनके माध्यम से असंख्य लोगों के जीवन में आए सार्थक बदलाव को। कुछ लोग बिना कोई ठोस काम किये ही देश-दुनिया से पुरस्कार और प्रसिद्धि बटोर लेते हैं, परंतु परिवर्तन के इन पुरोधाओं की न तो जनसंचार माध्यम सुध लेते हैं और न ही सरकारें। किंतु इनके प्रयासों से बदलाव का जो चित्र दिखायी दे रहा है उसे नकारा नहीं जा सकता। कुछ लोगों ने तो समाज की सिर्फ एक समस्या को पकड़कर उसके निराकरण हेतु अपना पूरा जीवन समर्पित कर दिया है। हरिद्वार में आशीष गौतम ने हजारों कुष्ठ रोगियों का पुनर्वास किया है। पोलियो की भांति भले ही कुष्ठ रोग का भी 2005 में भारत से उन्मूलन हो चुका हो, किन्तु यह बीमारी आज भी हर किसी को डराती है। कारण, बीमारी का इलाज भले ही शरीर से उन्मूलन हो गया हो, परंतु यह आज भी अधिसंख्य लोगों के दिमाग में बसी हुई है। यही कारण है कि कुष्ठ रोगियों को सामान्य बस्तियों में नहीं रहने दिया जाता। इस कारण उन्हें सड़क के किनारे अथवा किसी सुनसान जगह पर खुले आसमान के नीचे अमानवीय जीवन जीना पड़ता है। देशभर में 700 से अधिक कुष्ठ रोगियों की बस्तियां इसका प्रमाण हैं। ऐसी स्थिति में हरिद्वार स्थित 'दिव्य प्रेम सेवा मिशन' एक ऐसा स्थान है जहाँ कुष्ठ रोगियों की भेदभाव रहित सेवा की जाती है और उन्हें एक स्वाबलंबी जीवन जीने के लायक बनया जाता है। आशीष गौतम कहते हैं कि "यह कुष्ठ रोगी के रूप में ईश्वर की सेवा है। कुष्ठ रोगियों के लिए यह गौरव की बात नहीं है कि हम उनकी सेवा कर रहे हैं, बल्कि यह हमारे लिए सम्मान की बात है कि उन्होंने हमें अपनी सेवा करने का अवसर दिया। मैं उन सबमें भगवान् के दर्शन करता हूँ और भगवान की सेवा मानकर ही उनकी सेवा करता हूँ"।

आज हमारे देश में करीब पांच लाख लोग प्रतिवर्ष समय पर अंग प्रत्यारोपण न हो पाने के कारण काल का ग्रास बन जाते है। इसके विपरीत देश में प्रतिवर्ष 1.5 लाख लोग सड़क दुर्घटनाओं में मारे जाते है। यदि हम लोगों को अंगदान के लिए प्रेरित करें तो संभवत: एक भी भारतीय नागरिक की समय पर अंगदान के अभाव में मृत्यु नहीं होगी। अंगदान के क्षेत्र में एक मौन क्रांति का श्रीगणेश करते हुए दिल्ली की दधिचि देह दान समिति ने 1997 से लेकर अब तक 500 से अधिक मृत मानव शरीर और एक हजार से अधिक आंखें दिल्ली के विभिन्न मेडिकल कालेजों को

दान करायी हैं। अभी तक 20,000 से अधिक लोग समिति के माध्यम से मृत्यु के उपरांत देहदान एवं अंगदान का संकल्प ले चुके हैं। इस समिति से जुड़े सदस्य अपने पूरे शरीर का अपने को केवल मात्र ट्रस्टी मानते हैं। ऐसे समाज-शिल्पियों की सूची काफी लंबी है। महाराष्ट्र के जनजाति बहुल धुले जिले के एक युवक हर्षल विभांडिक ने गत दो वर्षों में अपने जिले के सभी 1103 सरकारी स्कूलों का बिना सरकारी सहयोग के डिजिटलीकरण कर दिया। यह प्रयास इसलिए भी प्रशंसनीय है क्योंकि इसमें 70 प्रतिशत सहयोग राशि वहां के ग्रामवासियों, स्कूली विद्यार्थियों और शिक्षकों ने दी है। इस प्रयोग के परिणामस्वरूप अकेले वर्ष 2018 में ही 2000 से अधिक विद्यार्थियों ने विभिन्न पब्लिक स्कूलों को छोड़कर सरकारी स्कूलों में प्रवेश लिया है। 1078 स्कूलों का डिजिटलीकरण करने के बाद जो 25 स्कूल बच गये वे वास्तव जिले में चल रहे उर्दू स्कूल थे, उसका डिजिटलीकरण इसीलिए नहीं हो पाया, क्योंकि किसी के पास उर्दू में डिजिटल सामग्री नहीं थी, इसीलिए हर्षल और रामभाऊ म्हालगी प्रबोधनी ने मिलकर एक कम्पनी से उर्दू के शिक्षकों की मदद से उर्दू में सामग्री तैयार कराई, और 23 जुलाई, 2016 को प्रथम उर्दू डिजिटल स्कूल का उद्घाटन किया। अब पूरे जिले में यह सुविधा उपलब्ध है।

गृहिणियों में आत्मविश्वास का जागरण

जब कोई संकट आता है तो अधिकतर गृहिणियां आंसू बहाना शुरू कर देती है महाराष्ट्र के सोलापुर की चन्द्रिका चैहान ऐसी महिलाओं के लिए एक प्रेरणा हैं जिन्होंने अपने परिवार को ही संकट नहीं उबारा, बल्कि स्वयं सिलाई के काम से शुरुआत करके संकट में फंसी अपने शहर की 15,000 महिलाओं को स्वाभिमानपूर्वक जीवन जीने लायक बनाया, जिनमें 400 प्रथम पीढ़ी की उद्यमी बन गई हैं। श्रीमती चौहान का प्रथम उद्देश्य है महिलाओं में आत्मविश्वास का जागरण और उसकी प्रतिभा को जाग्रत करते हुए उसे परिवार के साथ-साथ अपने सामाजिक उतरदायित्व को प्रभावी ढंग से निभाने के योग्य बनाना है। कभी अमीरों और रसूखदारों का खेल माने जाने वाले निशानेबाजी को पश्चिमी उत्तर प्रदेश के बागपत जिले में स्थित जौहड़ी गांव में डा. राजपाल सिंह ने जन सामान्य का खेल बना दिया। उन्होंने लाठी, गन्ने, ईट के टुकड़ों, पानी से भरे जग, खेत में काम आने वाले उपकरणों आदि से अभ्यास कराकर 42 अन्तर्राष्ट्रीय, 300 राष्ट्रीय और 2000 से अधिक राज्य स्तर के निशानेबाज तैयार कर पूरी दुनिया में एक मिसाल कायम कर दी। आश्चर्य नहीं होगा यदि आने वाले ओलंपिक विजेता इसी शूटिंग रेंज से निकलें। यहाँ से चार खिलाडियों का चयन टोक्यो ओलम्पिक के लिए हुआ है। डॉ. राजपाल सिंह अब वीआईपी लोगों को कोचिंग देने की बजाय गाँव से एकलव्य खोजकर उन्हें अंतरराष्ट्रीय स्तर के निशानेबाज बना रहे हैं।

दिल्ली के व्यवसायी श्रवण गोयल ने गांवों से शहरों में आकर नौकरी अथवा व्यवसाय करने वाले लोगों को वापस अपने-अपने गांव के विकास में सहभागी बनने के लिए जो प्रयास शुरू किया वह अब एक जनांदोलन बनने की ओर अग्रसर है। संसाधनों के अभाव में भी ये लोग अपने-अपने स्थान पर डटे हुए हैं। यदि उनके काम से प्रेरित होकर कुछ लोग भी अपने-अपने स्थान पर परिवर्तन के कुछ ठोस प्रयास प्रारंभ करते हैं तो कुछ ही समय में देश एक बड़े बदलाव को महसूस करने लगेगा। कुछ प्रयासों का तो अद्भुत असर हुआ है। कुछ स्थानों पर आज सेवित ही अपने आसपास के दूसरे जरूरतमंद लोगों की सेवा कर उन्हें स्वावलंबी बनाने का प्रयास कर रहे हैं। कुछ स्थानों पर मानसिकता में जो बदलाव दिखायी दिया वह आंखें खोल देने वाला है।

अंत्योदय की मौन क्रांति

महाराष्ट्र में गिरीश प्रभुणे ने राज्य की उन घुमंतु जनजातियों के एक लाख से अधिक लोगों के जीवन को स्थायित्व प्रदान कर उन्हें सरकारी योजनाओं का लाभ दिलवाया है, जिन्हें सरकारी रिकार्ड में पिछले कुछ समय तक 'जन्मजात अपराधी' माना जाता था। लातूर के संजय कांबले ने अपने शहर के कचरा बीनने वाले 850 से अधिक

लोगों को स्वाभिमानपूर्वक जीवन जीने योग्य बनाया है। महाराष्ट्र के ही अहमदनगर जिले में डा. गिरीश कुलकर्णी ने वेश्यावृत्ति में फंसी 900 से अधिक महिलाओं को न केवल बदनाम मोहल्ले से निकालकर स्वाभिमानयुक्त जीवन जीने लायक बनाया है, बल्कि उनकी दूसरी पीढ़ी को इस धंधे में फंसने से बचा लिया। राजस्थान के भरतपुर में डॉ. बी.एम. भारद्वाज ने सड़कों के किनारे व गंदगी के ढ़ेर पर जिंदगी गुजारने वाले 23,000 से अधिक निराश्रित मानसिक रोगियों को स्वस्थ करके उनके बिछुडे परिवारों से मिलवाया है। अभी भी वे अपने 54 आश्रमों के माध्यम से 9700 से अधिक ऐसे लोगों की देखभाल कर रहे हैं। बेंगलुरु की संस्था 'सोकेयर' ने गत 18 सालों में 300 से अधिक कैदियों के बच्चों को अपराधी बनने से बचाया है। उज्जैन के अनिल डागर ने पिछले 24 साल में 24,000 से अधिक लावारिश लाशों का अंतिम संस्कार किया है *(कुमार*, 2019)।

ऐसे समाज-शिल्पियों की सूची काफी लंबी है। महाराष्ट्र के ही रायगड जिले के पेन तालुका की 500 गृहणियों ने अपने आसपास की 3000 जनजाति बालिकाओं और करीब एक लाख अन्य लोगों के जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन कर दिया। लातूर शहरवासियों ने तो 2017 में ऐसी मिसाल कायम कर दी जो हमारे देश ही नहीं, बल्कि दुनिया के अन्य देशों की भी अनेक समस्याओं का समाधान कर सकती है। अपने सभी राजनीतिक मतभेदों को भुलाकर बिना किसी सरकारी सहयोग के उन्होंने 18 किमी लंबी मांजरा नदी को पुनर्जीवित कर अपने शहर की पेयजल समस्या का स्थायी समाधान कर लिया। दिल्ली के राम मनोहर लोहिया अस्पताल में नर्सिंग होम विभाग के प्रमुख रहे डॉ. राजेन्द्र सिंह टोंक पिछले 15 वर्षों में दिल्ली और आसपास के क्षेत्रों में साप्ताहिक स्वास्थ्य शिविरों के माध्यम से छह लाख से अधिक मरीजों का निःशुल्क उपचार कर चुके हैं। सौराष्ट्र (गुजरात) के मनसुखभाई सुवागिया ने 300 से अधिक गांवों में ग्रामवासियों के सहयोग से 3000 से अधिक चेक डेम का निर्माण किया है और वे भारतीय नस्ल की गायों के संरक्षण हेतु अद्भुत काम कर रहे हैं। उदयपुर के डॉ. पीसी जैन ने 2000 से अधिक लोगों को वर्षा जल संरक्षण हेतु प्रेरित किया। उत्तराखंड में विजय जड़धारी ने परम्परागत बीजों की 600 से अधिक किस्मों का संरक्षण किया है। राजस्थान में 'अपना संस्थान' ने दो वर्षों में एक लाख परिण्डे टांगकर लाखों पक्षियों को तपती धूप में बेहोश होकर मरने से बचाया है। जयपुर की दुदु तहसील के लापोडिया गांव में ग्रामवासियों ने प्राकृतिक तरीके से जंगल विकसित कर पक्षियों, कीटों एवं पौधों की कई सौ प्रजातियों को संरक्षित किया है *(कुमार, 2019)*।

संसाधनों के अभाव में भी डटे हैं मैदान में

देश में परिवर्तन के ऐसे अनेक अग्रदूत हैं। संसाधनों के अभाव में भी ये लोग अपने-अपने स्थान पर डटे हुए हैं। यदि उनके काम से प्रेरित होकर कुछ लोग भी अपने-अपने स्थान पर परिवर्तन के कुछ ठोस प्रयास प्रारंभ करते हैं तो कुछ ही समय में देश एक बड़े बदलाव को महसूस करने लगेगा। कुछ प्रयासों का तो अद्भुत असर हुआ है। कुछ स्थानों पर आज सेवित ही अपने आसपास के दूसरे जरूरतमंद लोगों की सेवा कर उन्हें स्वावलंबी बनाने का प्रयास कर रहे हैं। कुछ स्थानों पर मानसिकता में जो बदलाव दिखायी दिया वह आंखें खोल देने वाला है। सरकारी एजेंसियों की प्रतीक्षा करने की बजाए महाराष्ट्र के धुले जिले के जनजाति गांव बारीपाड़ा में ग्रामवासियों ने अपने संसाधनों एवं श्रम से परिवर्तन का ऐसा प्रयोग किया है, जिसे देखने के लिए आज दूसरे ग्रामवासी ही नहीं, बल्कि सरकारी अधिकारी और दुनियाभर से विशेषज्ञ भी आते हैं। इन समाज-शिल्पियों ने अपने प्रयासों से सिद्ध कर दिखाया है कि सरकारी संस्थाओं की प्रतीक्षा करने की बजाए यदि समाज स्वयं अपने स्तर पर पहल करता है तो गंदगी, गरीबी, अशिक्षा, कुपोषण, छुआछूत जैसी समस्याएं लंबे समय तक हमारा मार्ग नहीं रोक सकती। समाज के सबसे अभावग्रस्त लोगों के विकास हेतु सरकारी संस्थाएं जो भी प्रयास कर रही हैं वे अपनी जगह हैं, परंतु इस काम में समाज की भी बहुत बड़ी भूमिका है। समाज के सहयोग से संचालित अनेक संस्थाएं समाज में बदलाव का बहुत बड़ा कम कर रही हैं। कुछ संस्थाओं के माध्यम से समाज के अभावग्रस्त लोगों के जीवन में जो बदलाव आया है वह किसी भी सरकारी

प्रयास से शायद कभी संभव नहीं हो पाता। स्पष्ट है कि समाज के अंतिम व्यक्ति को सबल बनाने में समाज और सामाजिक संस्थाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है।

सब वर्गों के संतुलित विकास का मंत्र

दीनदयाल उपाध्याय के अंत्योदय दर्शन ने समाज के सभी वर्गों के संतुलित विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने का मार्ग प्रशस्त किया है। स्वतंत्रता के पश्चात भारत में विकास का जो मॉडल अपनाया गया है वह शहरी क्षेत्रों में निवास करने वाले अमीर लोगों पर अधिक केंद्रित है। इस व्यवस्था के कारण ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में रहने वाले अभावग्रस्त लोगों का विकास सरकारी योजनाओं के केंद्र में प्राय: नहीं रहता। इन अभावग्रस्त वर्गों में भी कुछ वर्ग ऐसे हैं जिनकी समस्याओं का समाधान न सरकारी योजनाओं के केंद्र में होता है और न ही सामाजिक संस्थाओं के एजेंडे में। ऐसे वर्गों में एक वर्ग है लावारिस मानसिक रोगी, जो प्राय: गंदगी के ढेर पर, मंदिरों, गुरुद्वारों, बस अड्डों, रेलवे स्टेशनों आदि के बाहर बहुत ही खराब हालत में पड़े रहते हैं। यह समाज का ऐसा वर्ग है जो न मांगकर खा सकता है और न ही छीनकर। जिसे न अपने जख्मों से बहते रक्त की चिंता है और न ही बारिश, गर्मी, सर्दी अथवा किसी तूफान की। ऐसी हालत में महिलाओं के साथ जो अमानवीयता होती है वह अत्यंत हृदयविदारक है। ऐसा ही दूसरा वर्ग है घुमंतू जनजातियाँ। यह समाज का ऐसा वर्ग है जो कभी किसी एक स्थान पर नहीं ठहरता। इस कारण न इनके पास मतदाता पहचान पत्र होता है और न ही आधार कार्ड अथवा ऐसा कोई अन्य दस्तावेज, जिसकी मदद से इन्हें सरकारी योजनाओं का लाभ मिल सके। ये भारत के नागरिक हैं यह सिद्ध करने के लिए भी इनके पास सिर्फ एक ही दस्तावेज होता है और वह है कुछ थानों में रखा हुआ एक रजिस्टर, जिसमें इनके सभी परिवारजनों का नाम 'जन्मजात अपराधी' के रूप में दर्ज होता है। ऐसा ही तीसरा वर्ग है कूड़ा बीनने वाले लोग। कचरा हर शहर और घर में उत्पन्न होता है और कचरा एकत्र करने वाले और उसकी रीसाइक्लिंग में योगदान देने वाले इन लोगों की समस्याओं को कोई समझना नहीं चाहता। ये ऐसे लोग हैं जिनका भले ही अर्थव्यवस्था और स्वच्छता में बहुत बड़ा योगदान है, परंतु उनके योगदान की कहीं गणना नहीं होती। ये लोग कूड़ा बीनते समय अक्सर गंभीर बीमारियों का शिकार हो जाते हैं, परंतु उनकी समस्याओं को कोई समझने का प्रयास नहीं करता। ऐसे सभी वर्गों के विकास में अंत्योदय की संकल्पना मार्गदर्शक है।

संदर्भ

उपाध्याय, डी.डी. (2016). *दीनदयाल उपाध्याय सम्पूर्ण वांग्मय*. खंड-11, पृष्ठ-200, नई दिल्ली: प्रभात प्रकाशन.

उपाध्याय, डी.डी. (2016). *दीनदयाल उपाध्याय सम्पूर्ण वांग्मय*. खंड-11, पृष्ठ-240, नई दिल्ली: प्रभात प्रकाशन.

उपाध्याय, डी.डी. (2016). *दीनदयाल उपाध्याय सम्पूर्ण वांग्मय*. खंड-11, पृष्ठ-260, नई दिल्ली: प्रभात प्रकाशन.

उपाध्याय, डी.डी. (2016). *दीनदयाल उपाध्याय सम्पूर्ण वांग्मय*. खंड-12, पृष्ठ-264, नई दिल्ली: प्रभात प्रकाशन.

उपाध्याय, डी.डी. (2016). *दीनदयाल उपाध्याय सम्पूर्ण वांग्मय*. खंड-13, भूमिका नई दिल्ली: प्रभात प्रकाशन.

उपाध्याय, डी.डी. (2016). *दीनदयाल उपाध्याय सम्पूर्ण वांग्मय*. खंड-12, पृष्ठ-260, नई दिल्ली: प्रभात प्रकाशन.

उपाध्याय, डी.डी. (2016). *दीनदयाल उपाध्याय सम्पूर्ण वांग्मय*. खंड-12, नई दिल्ली: प्रभात प्रकाशन.

कुमार, पी. (2019). *आधुनिक भारत के गुमनाम समाज-शिल्पी*. नई दिल्लीः गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति, संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार.

झा, पी. (2018). *अंत्योदयः समाज के अंतिम व्यक्ति के उत्थान का संकल्प*. नई दिल्लीः प्रभात प्रकाशन.

मिश्र, ए. डी. (2019). *दीनदयाल उपाध्याय: एक अध्ययन*. नई दिल्ली: कांसेप्ट पब्लिशिंग कं.प्रा. लिमिटेड.

राठी, एस. (2023). *सर्वोदय का गांधीवादी दर्शन और उसके सिद्धांत*. https://www.mkgandhi.org/articles/gandhi_sarvodaya.html से दिनांक 25 मई, 2023 को पुन: प्राप्त.